जमदग्नि की शिवभक्ति

नर्मदा के उत्तर तट पर कपिलासंगम के बाद वैदूर्य के पश्चिम भाग में नर्मदापुर नामक स्थान विख्यात है। वहाँ बहुत से देवर्षि, ब्रह्मर्षि, राजर्षि, तपस्वी तथा व्यवसायी लोग निवास करते थे। नर्मदापुर के निवासियों में से एक जमदग्नि नामक मुनि भी थे, जो सदा शिवभक्ति में तत्पर रहते थे। वे प्रतिदिन नर्मदासंगम में स्नान करके नाना प्रकार के गन्ध – पुष्प तथा अगुरु आदि मनोहर उपचारों द्वारा भगवान् महेश्वर की पूजा करते और दक्षिणामूर्ति की शरण लेकर शिवमन्त्र के जप में संलग्न रहते थे। एक मासतक इस प्रकार जप में लगे हुए मुनि को सिद्धेश्वर लिङ्गस्वरूप देवदेव महेश्वर ने प्रत्यक्ष दर्शन देकर कहा – 'ब्रह्मन्! मैं तुम्हारी भक्ति तथा रुद्रजप से सन्तुष्ट हूँ।'

जमदग्नि बोले – परमेश्वर! मुझे होम और यज्ञक्रिया के लिये कामधेनु प्रदान कीजिये। क्योंकि धर्म – कर्म और शुभ अनुष्ठान के लिये, शिवपूजा और तर्पण के लिये तथा देवकार्य और पितृकार्य की सिद्धि के लिये गौओं को ही अत्यन्त पवित्र माना गया है।

महादेवजी ने कहा – महाभाग्! तुम्हें समस्त कामनाओं की सिद्धि के लिये यह कामधेनु दी जा रही है।

ऐसा कहकर महादेवजी वहीं अन्तर्धान हो गये। जमदग्नि मुनि जिन – जिन कामनाओं के लिये कामधेनु से याचना करते, वे सब उन्हें प्राप्त हो जाती थीं। अब वे सोने के पात्र में भाँति – भाँति के मनोवाञ्छित भोज्य पदार्थ परोसकर सहस्रों ऋषियों को प्रतिदिन इच्छानुसार भोजन कराने लगे। माननीय ब्रह्मर्षि और देवतालोग भी मुनिश्वर जमदग्नि के आश्रम पर आकर उनकी कीर्ति बढ़ाने लगे।

इस प्रकार कुछ समय व्यतीत होने पर एक दिन राजा कार्तवीर्य अपनी माहिष्मतीपुरी छोड़कर शिकार खेलने के लिये विन्ध्यपर्वत पर आया और नर्मदा के तट पर उसने अपना पड़ाव डाल दिया। शिकार खेलते – खेलते वह जमदग्नि के आश्रम पर गया और इस प्रकार बोला – 'मुने! यह गौ तुम्हारे योग्य नहीं है। इसे मुझे दे दो।' कार्तवीर्य की यह बात सुनकर मुनिश्वर जमदग्नि बहुत देरतक सोच – विचार में पड़े रहे। उन्हें कुछ भी उत्तर न देते देख राजा ने मुनि को मरवा दिया और स्वयं उनकी कामधेनु को बलपूर्वक हरकर ले जाने लगा। जब वह आश्रम से बाहर निकला तब उस होमधेनु पर कोड़ों की मार पड़ने लगी। बार – बार ताड़ित होने पर गौ ने शाप देते हुए कहा – 'अरे ओ नृपाधम! रेणुकानन्दन परशुराम तेरे समस्त कुल का संहार कर डालेंगे।' इस प्रकार शाप देकर कामधेनु पुनः स्वर्ग को चली गयी। उस समय लोगों में महान् हाहाकार मच गया। सब कहने लगे – 'यह कौन दुराचारी आ गया, जिसने ब्राह्मणों के कोप को बढ़ाया है।' तदनन्तर महावीर परशुराम ने पिता के मारे जाने का समाचार सुना। सुनते ही वे प्रज्वलित अग्नि की भाँति क्रोध से जल उठे और सहसा आश्रम पर आये। पिता को मारा

गया देख क्रोध से उनका पराक्रम दूना हो गया। वे सहसा उठकर माहिष्मतीपुरी की ओर चल दिये। वहाँ कार्तवीर्य अर्जुन को देखकर परशुराम ने क्रोधपूर्वक कहा–'अरे ओ नराधम! खड़ा रह, खड़ा रह। मेरे पिता की हत्या करके अब तू कहाँ जा सकता है?' ऐसा कहकर उन्होंने अपनी कुल्हाड़ी हाथ में ली और कार्तवीर्य की भुजारूपी वन को उसके मस्तकसहित काट डाला।[1] उस समय मुनिश्वर परशुराम क्षत्रियजाति के लिये प्रलयङ्कर बन गये थे। महापराक्रमी दुरात्मा कार्तवीर्य के मारे जाने पर देवताओं की दुन्दुभियाँ बज उठीं और आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी। उसी के प्रति क्रोध होने से परशुरामजी ने समूची पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित कर दिया और इस प्रकार अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके वे पिता के आश्रम पर लौट आये। माता तथा अन्यान्य मुनीश्वरों को नमस्कार करके उन्होंने विधिपूर्वक परशुरामेश्वर महादेव की स्थापना की। उसके समीप ही विशोका, एरण्डिका और पावनी नामवाली तीन शिलाएँ हैं। उन्हीं पर परशुरामजी ने पिता की मरणोत्तरकालीन श्राद्ध आदि क्रियाएँ सम्पन्न कीं।

(यह कथा गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित कल्याण के संक्षिप्त स्कंदपुराणांक के पृ. 764–765 से ली गयी है।)

❀❀❀❀❀❀

पङ्केनैव यथा पङ्कं रुधिरं रुधिरेण वै।।
हिंसया कर्मणा कर्म कथं क्षालयितुं क्षमः।
हिंसाकर्ममयोयज्ञः कथं कर्मक्षेय क्षमः।।

(पद्ममहापु. उत्तरखण्ड 132/140–141)

जैसे कीचड़ से कीचड़ तथा रक्त से रक्त को नहीं धोया जा सकता, उसी प्रकार हिंसाप्रधान यज्ञ–कर्म से कर्मजनित मल कैसे धोया जा सकता है। हिंसायुक्त कर्ममय(सकाम) यज्ञ कर्म–बन्धन का नाश करने में कैसे समर्थ हो सकता है।

1. कार्तवीर्य अर्जुन को मारने की शक्ति परशुराम ने भगवान् शिव की उपासना से ही प्राप्त की थी। इसका विस्तृत उल्लेख इसी पुस्तक में अन्य स्थलों पर किया गया है।